Golden Research Thoughts
ISSN 2231-5063
Impact Factor : 3.4052(UIF)
Volume-4 | Issue-8 | Feb-2015
Available online at lbp.world

आधुनिक समाज में तलाक के बढ़ते समस्या का विश्लेषणात्मक अध्ययन

विभा बाला[1] , डॉ० सरोजनी देवी[2]
[1]शोधार्थी, गृहविज्ञान विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा.
[2]सेवा–निवृत प्राध्यापिका, विश्वविद्यालय गृह विज्ञान विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा.

सारांश :

तलाक निश्चित तौर पर आज के इस आधुनिक युग में एक बड़ी सामाजिक समस्या बनकर उभरी है। इसे अगर तथाकथित पढ़े लिखे लोगों की समस्या कहें तो गलत नहीं होगा। किसी भी समस्या का कोई न कोई कारण होता है, हमें उस कारण को जानना होगा और तभी हम उसका समाधान निकाल सकते हैं। पहली नजर में 'तलाक' शब्द से एक सम्बन्ध के विच्छेद होने की बात सामने आती है। आखिर सम्बन्ध विच्छेद क्यों होती है? इसके कारण की विवेचना करें तो पता चलता है– यह वैचारिक वैमनस्य, वैचारिक असहिष्णुता, असहनशीलता, आपसी समझदारी का अभाव, आपसी विश्वास की कमी, आदि–आदि के चलते हुआ। इन शब्दों की कमी क्यों हुई– इसकी कई वजहें हैं। इसकी तह तक जायें तो पता चलेगा– इसमें इनके शिक्षा–दीक्षा, वैवाहिक पृष्टभूमि, पारिवारिक माहौल, संगति आदि शामिल हैं।

भूमिका :

समाज की व्यवस्था को बनाए रखने तथा यौन आवश्यकताओं की पूर्ति को संस्थात्मक तरीके के रूप में विवाह की संस्था को सामाजिक स्वीकृति दी गई। कुछ तो पारिवारिक तनावों के बावजूद अपना जीवन औपचारिक रूप से संगठित बनाए रखते हैं तथा कुछ धार्मिक–विश्वासों, पारिवारिक–प्रतिष्ठा तथा पारिवारिक दबावों के कारण अपना जीवन ऊपरी तौर पर संगठित रखते हैं परन्तु अंदर से पारिवारिक तनाव की स्थिति रहती है। यद्यपि बहुत से लोग तलाक को ही पारिवारिक विघटन का एकमात्र कारण मानते हैं। लेकिन तलाक पारिवारिक विघटन का एक चिन्ह मात्र है, इसका कारण यह है कि तलाक विवाह का वैधानिक विच्छेद है और इसका परिणाम परिवार का अंतिम रूप से विघटन है।

परम्परागत हिन्दू समाज में पहले विवाह एक धार्मिक कृत्य समझा जाता था, लेकिन आजकल यह धर्म निरपेक्ष होता जा रहा है। विवाह को मतैक्य सम्बन्धी मानने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। सन् 1950 के दशक के मध्य तक हिन्दू विधान में तलाक की अनुमति नहीं थी। यद्यपि कुछ जातियों में स्थानीय रिवाजों के अनुसार कुछ धन राशि देकर विवाह–विच्छेद की अनुमति दी जाती थी। चार दशक पूर्व हमारे देश के विधि निर्माताओं ने हिन्दू समाज को अशिक्षित व कठोर स्थिति से आधुनिक विचारधारा की ओर मोड़ दिया और अब 'पवित्र धार्मिक संस्कार' से 'पारस्परिक सहमति से विवाह–विच्छेद' में बदल गया है।

सभी विवाह सफल नहीं होते, कुछ असामंजस्य व कटुता से समाप्त होते हैं, कुछ असफल विवाहों वाले व्यक्ति भाग्य को मानते हुए अपना जीवन खींचते रहते हैं और पूरी जिन्दगी असमंजस की स्थिति में ही व्यतीत करते हैं। परित्याग चाहे स्थाई हो या अस्थाई, अवैधानिक व अनाधिकारिक होता है। पति या पत्नी का घर छोड़ना एक गैर–जिम्मेदारी का कार्य है क्योंकि परिवार भटकने की स्थिति में छोड़ दिया जाता है जबकि विवाह–विच्छेद वैधानिक रूप से वैवाहिक बन्धनों को तोड़ना है तथा यथार्थ विवाह की अन्तिम समाप्ति है। जब तक राज्य, विवाह की संस्था का संचालन करता है तब तक शादी के बंधनों से किसी भी प्रकार की मुक्ति के लिए सरकारी नियमों का पालन आवश्यक है। तलाक एक प्रकार की दुखान्त घटना है। जिसमें पति–पत्नी में से एक किसी आधुनिक पाश्चात्य समाजों में विवाह इतने अधिक अस्थायी हो गए हैं कि वहां पारिवारिक विघटन का सर्वप्रमुख कारण तलाक ही है परन्तु यह भी कहा जाता है कि पारिवारिक विघटन के पश्चात ही तलाक की समस्या उस समय उत्पन्न होती है जब एक या दोनों पक्ष अपने संबंध तोड़ देना चाहते हैं। तलाक सामंजस्यपूर्ण एवं सुखी परिवारों की समस्या नहीं है। इस प्रकार तलाक टूटे हुए विवाहों को कानूनी आधार प्रदान करता है। इसके साथ ही बहुत से ऐसे भी विवाह हैं जो पति–पत्नी को कष्टप्रद तो है पर उनमें तलाक की समस्या उत्पन्न नहीं होती। अधिकतर पति ही अपनी पत्नी का परित्याग करते हैं। विवाह–विच्छेद सदैव एक दुखद स्थिति है क्योंकि अस्वीकृत साथी अपमानित, तिरस्कृत व पीड़ित अनुभव करता है किन्तु परित्याग के सामाजिक दुष्परिणाम अधिक दुखदायी एवं अव्यावहारिक होते हैं, विशेष रूप से स्त्री के लिए। स्त्री को सामाजिक आर्थिक व भावनात्मक आघातों का सामना करना पड़ता है। भावात्मक आधार पर उसे सदैव यही अनुभव होता है कि उसके पति द्वारा उसे तिरस्कृत रूप से अस्वीकार किया गया है तथा बेकार की वस्तु समझ कर फेंक दिया गया है। इस तरह दुःख भोगना पड़ता है कि उसे यह निश्चित रूप से पता नहीं रहता कि उसका पति वापस आयेगा या नहीं और बच्चों को वह अपने पिता की अनुपस्थिति के बारे में क्या बताए? आर्थिक दृष्टि से जो स्त्री को आघात लगता है वह है आर्थिक संसाधनों की कमी, जिससे उसे अपने और बच्चों के भरण–पोषण में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। परित्यक्त महिला स्वयं को न तो विवाहिता की श्रेणी में रख पाती है न विधवा की श्रेणी में। जीविकोपार्जन के लिए या तो उसे स्वयं कोई कार्य करना पड़ता है या फिर अपने बच्चों को काम पर लगाना पड़ता है। कुछ महिलाओं को जब काम मिल जाता है तो उन्हें अधिक व्यस्त रहना पड़ता है। जिससे उनके बच्चों की उचित देख–रेख नहीं हो पाती या फिर वे अपनी आय को परिवार के लिए अपर्याप्त पाती हैं। ये सब परिस्थितियों बाल श्रम, किशोर अपराध, विघटित व्यक्तित्व आदि स्थितियों को जन्म देती हैं। किन्तु परित्याग की इस समस्या के विश्लेषण के लिए अभी तक कोई भी आधिकारिक समाजशास्त्रीय अध्ययन नहीं किया गया है, न ही हमारे देश में कोई ऐसी सामाजिक सुरक्षा की योजना चलाई गयी है जिसके अंतर्गत परित्यक्त स्त्रियों के मामलों को प्रकाश में लाया जा सके। परन्तु विवाह–विच्छेद की ओर हमारा ध्यान कुछ दशकों से आकर्षित हुआ है।

तलाक को व्यक्तिगत घटना नहीं समझना चाहिए। यद्यपि तलाक समस्या के व्यक्तिगत पक्ष भी हैं फिर भी बड़े पैमाने पर तलाक सामाजिक समस्या का रूप धारण कर लेता है क्योंकि राज्य या राष्ट्र का अस्तित्व, सफल पारिवारिक जीवन की सफलता पर ही निर्भर है। इस प्रकार समाज के वयस्क सदस्यों द्वारा वैवाहिक उत्तरदायित्वों का सुचारू रूप से संचालन, स्थिर पारिवारिक जीवन समाज की प्रथम आवश्यकता है।

यद्यपि विवाह स्वरूप सामाजिक पर्यावरण तथा परिस्थितियों के अनुरूप भिन्न–भिन्न होता है परन्तु विवाह प्रत्येक समाज की एक आवश्यक संस्था है। पति–पत्नी को विवाह आनन्द एवं सुख–शांति प्रदान करता है परन्तु विवाह जब सुख–शांति देने के स्थान पर कष्टदायक हो जाता है तो अनेक व्यक्तिगत पारिवारिक तथा सामाजिक समस्याओं को जन्म देता है, इन समस्याओं को दूर करने के लिए जब विवाह के बंधन में बंधे दो साथी वैवाहिक जीवन को महत्वपूर्ण और आवश्यक नहीं समझते तो वैवाहिक बंधनों को तोड़कर इसके लिए कानूनी मान्यता प्राप्त करते हैं जिसे तलाक कहा जाता है। विद्वानों के अनुसार 'तलाक

सर्वदा दुखांत होता है क्योंकि इससे साधारणतः आपसी विश्वास समाप्त हो जाता है, सत्य नष्ट हो जाता है और प्रेम निवृत्त हो जाती है।'

बहुत अधिक समय नहीं बीता है, जब भारतीय महिलाएँ तलाक का नाम लेना भी पाप जैसा मानती थीं। भारतीय समाज में तलाक के गिने–चुने मामले ही होते थे। तलाक लेने वाली महिलाओं को लोक निकृष्ट मानते थे। दोष पति का हो या पत्नी का। माना यही जाता रहा है कि पत्नी में ही कोई दोष होगा, तभी तो पति ने छोड़ दिया। महिलाएँ तलाक शुदा महिला से बात करना भी अच्छा नहीं समझती थीं और पुरुष उसे आसानी से हाथ आनेवाला माल समझते थे। तलाक–शुदा महिला के विषय में माना जाता था कि वह अत्यंत गिरी हुई तथा बदचलन औरत है। अशिक्षा और जागरुकता के अभाव में औरत पति के घर में घुट–घुटकर मर जाना ही तलाक से बेहतर समझती थी।

तलाक शुदा महिलाओं के विषय में उपरोक्त मानसिकता में अधिक अंतर तो अभी तक नहीं आया है, फिर भी तलाक के मामले पहले से कई गुना बढ़ गये हैं। कुछ लोग इसे विदेशी संस्कृति का असर मानते हैं। उनका मानना है कि विदेशी महिलाओं की देखा–देखी भारतीय महिलाएं भी तलाक की ओर कदम उठा रही हैं, परंतु तलाक के लिए मात्र बढ़ते विदेशी माहौल को दोष नहीं दिया जा सकता। तलाक के बढ़ते मामलों के लिए एक महत्वपूर्ण कारण है, महिलाओं में बढ़ती जागरुकता। जब तक नारी घर की चहारदीवारी में कैद थी, तब तक वो अपने आपको चौका–चूल्हा तथा पति–बच्चों तक ही सीमित मानती रही। पति के घर तथा आश्रय के बिना भी उसका कोई व्यक्तित्व हो सकता है, वह इससे अनजान ही थी। पति चाहे दुराचारी या अत्याचारी कैसा भी हो, उससे अलग होने की बात सुनकर भी उसे अपने लोक–परलोक बिगड़ने का भय घेर लेता था। शिक्षा के अभाव में बचपन से वो दादी–नानी तथा माँ की इसी सीख को सुनती आ रही थी कि पति के घर में ही उसका स्वर्ग है तथा कुछ भी हो जाए, पति के घर से उसकी अर्थी ही बाहर निकले।

आर्थिक रूप से स्वतंत्रता ने नारी के आत्मविश्वास को बढ़ाया ही है। अब वह अपने पति को अपना मित्र तो मानने को तैयार है, लेकिन स्वामी नहीं। दूसरी ओर पुरुष के सोचने के ढंग अभी तक सामंतवादी हैं। पत्नी उसके लिए उसकी संपत्ति के ही समान है, वह अभी तक अपने अहम के कारण उसे अपने बराबरी का नहीं मान सका है। फलस्वरूप जब दोनों के ही अहम टकराते हैं तो तलाक की नौबत आ ही जाती है।

इसके अलावा आर्थिक स्वतंत्रता की प्राप्ति तथा महँगाई की मार से बचने के लिए नारी को भी घर से निकलकर कार्य करने बाहर आना पड़ा, जिससे उस पर कार्य का बोझ और बढ़ा। ज्यादातर पति यह तो चाहते हैं कि पत्नी कमाकर लाये, किंतु घरेलू कार्यों में सहायता करने में उनका पुरुष जन्य अहम आड़े आता है। घर–बाहर दोनों ही जिम्मेदारियों से त्रस्त महिला तुनक मिजाज हो जाती है। कार्य के बोझ से बढ़ते तनावों को झेलती महिलाएँ पति से तलाक ले लेना ही बेहतर समझती हैं। रोज–रोज की आपा–धापी, लड़ाई–झगड़े आखिरकार तलाक के लिए अदालत तक आ पहुँचते हैं।

ऐसा नहीं है कि तलाक सिर्फ महिलाओं की ही तरफ से लिये जा रहे हैं। बल्कि पुरुष इसके लिए दोषी हैं। शिक्षित, जागरूकता तथा कार्यशील महिला उसके अहम को चुनौती सी देती है।

पत्नी का सज–धजकर काम पर जाना, अन्य पुरुषों के साथ मिल–जुलकर कार्य करना यह सब उनमें अविश्वास की स्थिति उत्पन्न करते हैं। बचपन से अब तक घर में देखी गयी दीदी और मां की वह छवि, जो कि घर के अंदर ही रहती थी और परिवार के लिए ही अपना सर्वस्व समर्पित कर देती थी, के बाद अपनी शिक्षित और आधुनिक पत्नी के सर्वथा नवीन स्वप्न के साथ वह सामंजस्य नहीं बैठा पाता। पति संभवतः नारी के इस नवीन रूप से आहत हो आक्रामक हो उठता है।

ज्यादातर स्थितियों में पहले यदि पत्नी कम पढ़ी–लिखी रह जाये या पति के पद के अथवा स्टेटस के अनुरूप न हो तो पति पत्नी को घर में ही कैद कर बाहर किसी दूसरी महिला को मित्र बनाकर अपनी आवश्यकताएँ पूरी कर लेता था परंतु अब वह ऐसे विवाह से तलाक ले मुक्ति ही पाना चाहता है, जिससे वह अपनी जिंदगी फिर से शुरू कर सके।

महिला और पुरुष को साथ–साथ काम करने तथा कार्य करने के दौरान उनमें आकर्षण पनपना स्वाभाविक ही है। पारस्परिक समाज में प्रेम विवाह तेजी से बढ़ा। पारस्परिक आकर्षण के कारण हुए अधिकतर प्रेम विवाहों में स्थायित्व का अभाव होता है। बिन सोचे–समझे जल्दबाजी में किये जाने वाले प्रेम विवाह भी वैचारिक तथा सामाजिक विभिन्नताओं के कारण तलाक का कारण बन जाते हैं।

भारतीय समाज में संप्रति तलाक की गति विद्यमान है। यहाँ सामाजिक परिवर्तन की अनेक प्रक्रियाओं उद्योगीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण तथा अन्य गतिविधियों के कारण जीवन सामंजस्य से असामंजस्य की स्थितियों की ओर बढ़ रहा है। इस असामंजस्य की स्थिति का प्रभाव जीवन के सभी पक्षों पर पड़ा है। वैवाहिक जीवन भी परिवर्तन की धारा में आकर इससे प्रभावित हुआ है। विवाह अब केवल धार्मिक बंधन नहीं अपितु कानूनी संविदा या समझौता मात्र रह गया है, जिसे कानूनी आधारों पर तोड़ा जा सकता है। अतः स्पष्ट है कि अब कानून द्वारा पति–पत्नी दोनों को ही तलाक के अधिकार प्राप्त हैं।

तलाक के प्रकार :

विद्वानों के अनुसार वैधानिक तलाक के दो प्रकार हैं–

(1) पूर्ण तलाक–पूर्ण तलाक में विवाह के पूर्ण दायित्व एवं अधिकार समाप्त हो जाते हैं। और दोनों ही पक्ष समाज में अकेले व्यक्ति के रूप में रहते हैं। दोनों के संबंध समाप्त हो जाते हैं।

(2) आंशिक तलाक– आंशिक तलाक या वैधानिक अलगाव विवाह को नहीं समाप्त करता बल्कि केवल पति–पत्नी की वैधानिक पृथकता को मान्यता प्रदान करता है। इसमें वे न तो एक साथ सोते हैं न खाना ही खाते हैं। यह स्थिति तब तक रहती है जब तक पति–पत्नी पुनः एक आवास में रहने का निश्चय नहीं कर लेते। इसमें पत्नी के भरण–पोषण के लिए कुछ व्यवस्था की जाती है। परन्तु ऐसी दशा में पति–पत्नी दोनों ही में एक–दूसरे से मिलने और साथ रहने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। कभी कभी पुनर्विवाह पर धार्मिक रोक हो जाने पर भी पति या पत्नी तलाक की स्थिति से ऊबकर पुनः आपस में मिलकर रहने लगते हैं। कुछ लोगों का ऐसा कहना है कि इस प्रकार का तलाक अवैधानिक व्यवहारों को प्रोत्साहित करता है। इससे दोनों व्यक्तियों में तलाक के बाद पुनः एकीकरण की सम्भावना कम हो जाती है। स्त्रियाँ कभी–कभी अपने पति को अतिरिक्त विवाह करने से रोकने के लिए या अन्य धार्मिक या व्यक्तिगत कारणों से भी तलाक के लिए आवेदन करती हैं। परन्तु पूर्ण तलाक और आंशिक तलाक को प्रकट करने वाले कोई ठोस आधार नहीं हैं।

विवाह–विच्छेद के कारण विभिन्न विद्वानों ने इसके अपने–अपने कारण दिए हैं। एक के अनुसार तलाक के मुख्य कारण है :

- पारिवारिक सामंजस्य की कमी– पति–पत्नी के झगड़े, पति द्वारा दुर्व्यवहार तथा ससुराल वालों के साथ झगड़े रहते हैं।
- पत्नी का बाँझपन– पति या पत्नी का अनैतिक व्यवहार, बीमारी या स्वभाव के कारण पति का पारिवारिक उत्तरदायित्व का निर्वाह न कर सकना, तथा पति को सजा होना।

निष्कर्ष :

आधुनिक जीवन शैली के कारण बिखरते रिश्तों को संभालने की जिम्मेदारी हमारी ही बनती है। आज हमारा समाज जिस दो–राहे पर खड़ा है वहाँ ना तो पारंपरिकता बच पाई है ना हम पुरे आधुनिक हो पाएं। रिश्तों का टूटना बराबर अच्छी नजरों से नहीं देखा जाता है। हम तलाक तो ले लेते हैं लेकिन कहीं न कहीं हम समाज की नजरों से बचाते भी हैं। हमें अपने पार्टनर को समझने की कोशिश करनी चाहिए। बात–बात पर झगड़ने के बजाय एक दूसरे की बात को आराम से सुनें और हल निकालने की कोशिश करें। रिश्ते तोड़ देना और फिर अगले रिश्ते के लिए भटकना समस्या का हल नहीं हो सकता। इसलिए जिस रिश्ते में हों उसको न सिर्फ को बचाने की कोशिश करें बल्कि साथ ही उसे खुशहाल भी बनाए रखें।

संदर्भ–सूची :

1. कपाड़िया, के0एम0 (1963) ''भारत में विवाह एवं परिवार'', मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली
2. अहा! जिन्दगी– दैनिक भास्कर
3. आधुनिक समाज शास्त्रीय निबंध – एम. एन. सिंह
4. जेवियर समाज सेवा संस्थान लाइब्रेरी, विहाई।